सचिव, तिरूमुरूगन सहकारी कृषि ऋण समिति

बनाम

एम. ललिता (मृत) विधिक प्रतिनिधियों के माध्यम से और अन्य

11 दिसंबर, 2003

[शिवराज वी. पाटिल और डी. एम. धर्माधिकारी, जे.जे.]

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986-धारा 3-तमिलनाडु सहकारी समिति अधिनियम, 1983-धारा 90 और 156-सहकारी समिति और उसके सदस्यों के बीच विवादों पर विचार करने के लिए उपभोक्ता मंचों का अधिकार क्षेत्र पूर्व अधिनियम की उपलब्धता के तहत पूर्व अधिनियम विवादों के समाधान के लिए अतिरिक्त उपाय प्रदान करता है पूर्व अधिनियम के प्रावधानों की व्यापक, सकारात्मक और उद्देश्यपूर्ण रूप से व्याख्या की जानी चाहिए-सोडोन, जैसे- उपभोक्ता मंचों के लिए उपलब्ध अधिकार क्षेत्र।

प्रत्यर्थी-अपीलार्थी के सदस्य -सोसायटी के सदस्यों ने अपीलार्थी से धान के थैले गिरवी रखकर ऋण प्राप्त किया। याचिकाकर्ता ने उत्तरदाता को ब्याज के साथ ऋण राशि के पुनर्भुगतान की मांग हेतु नोटिस जारी किए। प्रत्यर्थियों ने जिला उपभोक्ता विवाद निवारण मंच के समक्ष याचिका दायर कर अपीलार्थी को आदेश जारी करने का निर्देश देने की मांग की कि ऋण

राशि के पुनर्भुगतान पर गिरवी रखे धान के थैले को जारी किया जावे या गिरवी रखने की तारीख से जारी करने की तारीख तक ब्याज के साथ धान के थैलों का बाजार मूल्य का भुगतान और मानसिक क्षति व कष्ट के लिए मुआवजे का भुगतान किया जावे। अपीलार्थी ने जिला मंच के समक्ष प्रतिवाद किया कि उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986 (1986 अधिनियम) के अंतर्गत तमिलनाडु सहकारी समिति अधिनियम, 1983 की धारा 90 (तमिलनाडू अधिनियम) के परिप्रेक्ष्य में प्रत्यर्थी की शिकायतों पर विचार करने का कोई क्षेत्राधिकार नहीं है। जिला मंच ने अपीलार्थियों के तर्क को खारिज कर दिया और उत्तरदाताओं के पक्ष में निर्णय लिया। हालांकि, जिला फोरम ने उत्तरदाताओं द्वारा दावा किया गया ब्याज प्रदान नहीं किया। याचिकाकर्ताओं ने राज्य आयोग के समक्ष अपील दायर की। प्रतिवादियों ने भी ब्याज के भुगतान के संबंध में अपील दायर की। राज्य आयोग ने एक सामान्य आदेश से अपीलार्थी की अपीलों को अनुमति दी और प्रत्यर्थियों की अपीलों को खारिज कर दिया। राष्ट्रीय आयोग के समक्ष प्रत्यर्थियों द्वारा प्रस्तुत पुनरीक्षण याचिकाओं को अनुमति दी गई।

अपील में, अपीलार्थी-सोसायटी ने तर्क दिया कि तमिलनाडु अधिनियम के प्रावधान विवादित रूप से सभी न्यायालयों के क्षेत्राधिकार को वर्जित कर देते हैं और उपभोक्ता मंचों सहित न्यायाधिकरण; कि तमिलनाडु अधिनियम ऐसे विवादों से निपटने वाला एक विशेष अधिनियम है और

इसमें अपील, पुनरीक्षण और पुनर्विलोकन के लिए विशिष्ट प्रावधान हैं; और यदि एक ही विवाद पर विभिन्न मंचों द्वारा विचार किया जाता है तो परस्पर विरोधी निर्णयों की संभावना होगी। अपीलार्थी ने वैकल्पिक रूप से प्रस्तुत किया कि यदि दलीलें स्वीकार नहीं की जाती हैं, तो मामले को राज्य आयोग को उसके समक्ष उठाए गए पोषणीयता के अलावा अन्य मुद्दों पर निर्णय लेने के लिए प्रतिप्रेषित किया जा सकता है।

प्रत्यर्थी-सदस्यों ने तर्क दिया कि 1986 के अधिनियम की धारा 3 स्पष्ट रूप से निर्दिष्ट करती है कि 1986 के अधिनियम के तहत उपचार उपलब्ध अन्य उपायों के अलावा है और इसका अल्पीकरण नहीं है; और तमिलनाडु अधिनियम की धारा 156 केवल कुछ मामलों के संबंध में सिविल न्यायालय के क्षेत्राधिकार को प्रतिबंधित करती है और न कि उपभोक्ता मंचों के क्षेत्राधिकार को।

अपील को खारिज की और मामले को राज्य आयोग को प्रतिप्रेषित किया गया, न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया:

1.1. उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986 की धारा 3 के प्रावधान तत्समय लागू किसी अन्य विधि के किन्ही अन्य प्रावधानों के अतिरिक्त होंगे न कि उनके अल्पीकरण में। 1986 अधिनियम की योजना और उपभोक्ताओं के हितों की बेहतर सुरक्षा के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए,

जब तक कि कोई स्पष्ट रूप से रोक नहीं हो, वर्तमान मामलों के संदर्भ में अतिरिक्त/विस्तारित क्षेत्राधिकार का अर्थ दिये जा सकने के लिए, प्रावधानों की व्यापक, सकारात्मक और उद्देश्यपूर्ण ढंग से व्याख्या की जानी चाहिए। [667-एच;668 ए-बी]

लखनऊ विकास प्राधिकरण बनाम। एम. एस. गुप्ता, [1994] 1 एससीसी 243; फेयर एयर इंजीनियर्स प्रा. लिमिटेड और अन्य बनाम एन. के. मोदी, [1996] 6 एससीसी 385; स्प्रिंग मीडोज अस्पताल और अन्य बनाम हरजोत अहलूवालिया जरिए के. एस. अहलूवालिया और अन्य, [1998] 4 एस. सी. सी. 39 और कर्नाटक राज्य बनाम। विश्वभारती हाउस बिल्डिंग कॉप सोसायटी और अन्य, [2003] 2 एस. सी. सी. 412, पर आधारित।

धुलाभाई और अन्य बनाम मध्य प्रदेश राज्य और अन्य [1968] 3 एस. सी. आर. 662 और अध्यक्ष, तिरुवल्लुवर परिवहन निगम बनाम उपभोक्ता संरक्षण परिषद, [1995] 2 एस. सी. 479, विशिष्ट।

661 सचिव तिरूमुरूगन सहकारी कृषि ऋण समिति बनाम एम. ललिता

1.2. अधिनियम 1986 में पीड़ित पक्ष के लिए उपलब्ध व्यापक है। एक विशिष्ट राहत देने के अलावा, 1986 के अधिनियम के तहत मंचों के

पास मानसिक पीड़ा कष्ट आदि के लिए मुआवजे देने का अधिकार क्षेत्र है। जो संभवतः तमिलनाडू अधिनियम के तहत नहीं दिया जा सकता है। मात्र इसलिए कि तमिलनाडू अधिनियम के तहत समिति सदस्यों और प्रबंधक के बीच अधिकार और देनदारियां बनाई जाती हैं और मंच प्रदान किये जाते हैं, यह 1986 के अधिनियम के तहत मंचों को प्रदान किये गए अधिकार क्षेत्र को छीन या अपवर्जित नहीं कर सकता है। यह 1986 के अधिनियम के तहत मंचों को प्रदत्त क्षेत्राधिकार को न तो वापस लेता है और न ही वर्जित करता है, 1986 अधिनियम उद्देश्यों और कारणों के संदर्भ में स्पष्ट रूप से और साशय एक निश्चित कारण की पूर्ति के लिए है। { 672 - एफ-जी]

1.3 . निर्णयों के टकराव का सवाल ही पैदा नहीं होता। यदि पक्ष तमिलनाडु अधिनियम और 1986 अधिनियम के अंतर्गत बनाये गये दोनों मंचों के समक्ष संपर्क करते हैं , यह 1986 के अधिनियम के तहत मंच के लिए है कि, वह पक्षकारों को मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर दूसरे मंच के समक्ष आगे बढ़ने या उपचार का लाभ उठाने के लिए छोड़ दे। [673 - ए-बी]

1.4 . राष्ट्रीय आयोग यह मानने में सही था कि राज्य आयोग द्वारा लिया गया यह विचार कि विवादों को मध्यस्थता के लिए संदर्भित करने से संबंधि तमिलनाडू अधिनियम के तहत प्रावधान, 1986 के अधिनियम के प्रावधानों पर प्रबल होंगे, गलत और असमर्थनीय हैं। गुण-दोष के आधार

पर अन्य मुद्दों पर निर्णय लेने के लिए मामले को राज्य आयोग को भेजने के लिए अपीलकर्ता द्वारा किया गया वैकल्पिक अनुरोध यह पुष्टि करते हुए स्वीकार किया जाता है कि उत्तरदाताओं द्वारा जिला फोरम के समक्ष की गई शिकायतें कायम रखने योग्य थी और जिला फोरम के पास विवादों से निपटने का क्षेत्राधिकार था। [673 – सी-ई]

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार सिविल अपील सं. 92/1998

राष्ट्रीय उपभोक्ता विवाद निवारण आयोग नई दिल्ली के आर. पी. सं. 358/ 1996 के निर्णय और आदेश दिनांक 30.5.97 से

के. वी. विश्वनाथन, के. वी. वेंकटरमन, अजीत मोहन सिंह, अतुल के. सिन्हा और बी. फघुनाथ अपीलार्थी की ओर से।

उत्तरदाताओं के लिए टी. एल. वी. अय्यर (एसी), अभय कुमार और एस. एन. झा।

न्यायालय का निर्णय शिवराज वी पाटिल द्वारा दिया गया।

प्रत्यर्थीगण ने अपीलार्थी समाज के सदस्य होने के नाते धान की बोरीयां गिरवी रखकर ऋण प्राप्त किया। अपीलार्थी सोसाइटी ने प्रत्यर्थीगण को लोन की राशि ब्याज सहित चुकाने के लिए नोटिस दिया। प्रत्यर्थीगण जिला उपभोक्ता विवाद निवारण फोरम तिरूचिरापल्ली में याचिका दायर की। जिसमें उन्होंने अपीलार्थी सोसायटी को यह निर्देष देने के लिए निवेदन

किया कि अपीलार्थी ऋण की राशि प्राप्त होने पर धान की बोरियां प्रत्यर्थीगण को देवे या फिर विकल्पतः अपीलार्थी को यह निर्देष दिया जाये कि वे धान की बोरियां बाजारू मूल्य गिरवी रखने की दिनांक से सुपुर्द करने की दिनांक तक के ब्याज सहित देवे। साथ ही मानसिक संताप व पीड़ा के लिए भी क्षतिपूर्ति के दिया जावे। अपीलार्थी सोसाइटी ने जिला उपभोक्ता विवाद निवारण मंच के समक्ष यह प्रारम्भिक आपत्ती उठाई कि तमिलनाडू को-ऑपरेटिव सोसाइटी ने 1980 (संक्षेप में एक्ट) की धारा 90 के तहत को&ऑपरेटिव सोसाइटी व उसके सदस्यों के मध्य विवाद उत्पन्न होने पर उपभोक्ता विवाद निवारण मंच का क्षेत्राधिकार प्राप्त नहीं है। जिला उपभोक्ता फोरम ने पक्षकारों के द्वारा प्रस्तुत किये गये अधिवचनों के तहत् निम्न बिंदु र्निधारण के लिए उठायेः&

- "(1) क्या शिकायतकर्ता उपभोक्ता है और क्या उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम के तहत आने वाला उपभोक्ता का विवाद है और क्या इस फोरम को इस प्रकार के मुद्दों को लेकर क्षेत्राधिकार नहीं है?
- (2) क्या सभी प्रकार की शिकायतों में विरोधी पक्ष की ओर से सेवा में कमीं और लापरवाही की गई है?

- (3) क्या सभी शिकायतों को लेकर शिकायतकर्ता अनुतोष प्राप्त करने के हकदार हैं?"

जिला फोरम ने उक्त बिंदु संख्या 1 व 2 प्रत्यर्थी के पक्ष में निर्णित किये तथा उन्हें राहत दी।

अपीलार्थी ने राज्य उपभोक्ता विवाद निवारण आयोग के समक्ष अपील दायर की। प्रत्यर्थीगण ने भी दिनांक 14-09-1992 से ब्याज के भुगतान के संबंध में अपील दायर की। राज्य आयोग ने एक ही आदेश से अपीलार्थी द्वारा दायर अपील को स्वीकार किया तथा प्रत्यर्थीगण द्वारा दायर की गयी अपील को खारिज किया। राज्य आयोग ने निर्णित किया कि अधिनियम की धारा के तहत प्रत्यर्थीगण की अपील संधारणीय नहीं है। इसलिए राज्य आयोग ने अन्य मामलों पर भी गौर नहीं फरमाया।

राज्य आयोग के आदेश से व्यथित होकर प्रत्यर्थीगण ने राष्ट्रीय उपभोक्ता विवाद निवारण आयोग के समक्ष पुनरीक्षण याचिका दायर की। राष्ट्रीय आयोग ने पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने के पश्चात पाया कि राज्य आयोग के आदेश को अपास्त किया गया और जिला फोरम को बहाल किया गया। इसलिए हस्तगत अपील में (1) अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता का तर्क रहा कि अधिनियम की धारा 90 तथा उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986 सीपीसी की धारा 9 एन सभी न्यायालयों व

न्यायाधिकरणों के क्षेत्राधिकार को वर्णित करती है। वर्तमान मामले के विवाद अधिनियम की धारा 156 के तहत आते हैं। (2) यह अधिनियम एक विषेष अधिनियम है। जब किसी को-ऑपरेटिव सोसाइटी व उसके सदस्यों के बीच होने वाले विवादों को लेकर विशेष व विशिष्ट प्रावधान किए गए है तो फिर जिला उपभोक्ता फोरम के समक्ष प्रत्यर्थीगण द्वारा उठाया गया वाद संधारणीय नहीं है।(3) अधिनियम सपठित नियम से यह स्पष्ट होता है कि प्रबंधन व सदस्यों के विशेषाधिकार व दायित्व हैं। यदि अधिकार व दायित्व को लेकर कोई विवाद उत्पन्न होता है तो इसका निर्धारण रजिस्ट्रार द्वारा किया जावेगा। इसके साथ ही अपील पुनरीक्षण के भी प्रावधान किये गये है। इसी संदर्भ में धुलाभाई बनाम मध्यप्रदेश राज्य व अन्य [1968] 3 एस सी आर 662 का मामला अनुकरणीय है। (4) यदि प्रत्यर्थीगण के तर्क को स्वीकार कर लिया जाएगा तो स्थिति यह होगी कि एक पक्षकार 1986 के अधिनियम के तहत फोरम में जायेगा तथा दूसरा पक्षकार तमिलनाडू को-ऑपरेटिव सोसाइटी एक्ट 1969 के तहत जायेगा। या फिर एक ही पक्षकार दो मंचों (फोरमस में एक-एक या साथ-साथ जा सकता है। ऐसी स्थिति में निर्णयों में विरोधाभास व टकराव की स्थिति आ सकती है। अर्थात् तर्कों के समर्थन में विद्वान अधिवक्ता ने कुछ न्यायिक दृष्टांत भी दिये। विकल्पतः विद्वान अधिवक्ता का यह भी तर्क रहा कि यदि उनके तर्कों को नहीं माना जाता है तो भी राज्य आयोग ने

अपीलार्थी द्वारा दायर की गयी अपील में अन्य मुद्दों पर गुणावगुण पर निर्णय नहीं दिया है। इसलिए मामला राज्य आयोग को संधारणीयता के विवाद्यक के अलावा अन्य विवाद्यक पर निर्णय देने के लिए प्रति प्रेषित किया जावे।

इसके विरोध में प्रत्यक्षीगण पर नोटिस तामील होने के बावजूद भी कोई भी प्रतिनिधित्व करने के लिए उपस्थित नहीं हुआ लेकिन न्यायालय के अनुरोध पर विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता उपस्थित आए तथा उन्होंने आलौच्य आदेश का समर्थन करते हुए तर्क दिया कि 1986 के अधिनियम की धारा 3 में स्पष्टतः उपचार उपलब्ध है। अधिनियम 1986 के उद्देश्य कारण को मध्यनजर रखते हुए यह नहीं कहा जा सकता है कि जिला फोरम को विवाद निर्णित करने का क्षेत्राधिकार ना हो। उन्होने यह भी दलील दी कि अधिनियम की धारा 156 भी जिला फोरम के क्षेत्राधिकार को वर्जित नहीं करती है।यह केवल कुछ निश्चित मामलों को लेकर दीवानी न्यायालय का क्षेत्राधिकार वर्जित करती है। विद्वान अधिवक्ता ने यह भी तर्क दिया कि उपभोक्ता शब्दावली में को&ऑपरेटिव सोसायटी का सदस्य भी शामिल है। इसलिए 1986 के अधिनियम से त्वरित व व्यापक अनुतोष दिये जा सकते हैं विद्वान अधिवक्ता का ध्यान आकर्षित करवाया तथा अपने तर्कों के समर्थन में कुछ न्यायिक निर्णय भी पेश किये।

हमनें उभय पक्षों की दलीलों पर ध्यानपूर्वक विचार किया। अधिनियम के प्रावधान जो कि इस मामले में प्रासंगिक हैं निम्नानुसार हैंः-

"धारा 90. विवाद - (1) यदि किसी पंजीकृत सोसायटी के बोर्ड के गठन या प्रबंधन या व्यवसाय से संबंधित कोई विवाद धारा 75 की (उपधारा (3) के तहत गठित सक्षम प्राधिकारी द्वारा की गई अनुशासनात्मक कार्रवाई के संबंध में विवाद के अलावा या रजिस्ट्रार या सोसायटी या उसके बोर्ड के खिलाफ सोसायटी के एक वेतनभोगी सेवक के खिलाफ विवाद के अलावा) उठता है -

(ए) सदस्यों, पूर्व सदस्यों तथा पूर्व सदस्यों और मृत सदस्यों के माध्यम से दावा करने वाले व्यक्तियों के बीच, या

(बी)किसी सदस्य, पूर्व सदस्य या किसी सदस्य, पूर्व सदस्य या मृत सदस्य के माध्यम से दावा करने वाले व्यक्ति और सोसायटी, उसके बोर्ड या सोसायटी के किसी अधिकारी, एजेंट या नौकर के बीच, या

(सी) सोसायटी या उसके बोर्ड और किसी पिछले बोर्ड, किसी अधिकारी, एजेंट या नौकर, या किसी पिछले अधिकारी, पिछले एजेंट या पिछले नौकर, या किसी मृत अधिकारी,

मृत एजेंट, या मृतक के नामित, उत्तराधिकारी या कानूनी प्रतिनिधियों के बीच सोसायटी के मध्य का सेवक, या **सचिव तिरूमुरूगन सहकारी कृषि ऋण समिति बनाम एम. ललिता**

(डी) सोसायटी और किसी अन्य पंजीकृत सोसायटी के बीच, विवाद, इन सभी विवादों को निर्णय के लिए रजिस्ट्रार को प्रस्तुत किया जाएगा।

स्पष्टीकरण - इस धारा के प्रयोजन के लिए, विवाद में निम्न शामिल हैं -

(i) किसी पंजीकृत सोसायटी द्वारा किसी सदस्य, पूर्व सदस्य या मृत सदस्य के नामांकित व्यक्ति, उत्तराधिकारी या कानूनी प्रतिनिधि को देय किसी ऋण या मांग के लिए दावा, चाहे ऐसा ऋण या मांग स्वीकार की जाए या नहीं।

(ii) पंजीकृत सोसायटी द्वारा किसी सदस्य, पूर्व सदस्य या मृत सदस्य के नामांकित व्यक्ति, उत्तराधिकारी या कानूनी प्रतिनिधि को सोसाइटी की भूमि को वापस करने का दावा व अन्य अचल सम्पतियां जो किन्ही शर्तो के तहत

अवतरित की गयी थी, शर्तों के भंग होने पर उनका कब्जा वापस लेने का दावा तथा

(iii) धारा 34 की उपधारा (3) के तहत बोर्ड द्वारा निर्णय:

बशर्ते कि किसी भी चुनाव से संबंधित या उसके संबंध में कोई भी विवाद ऐसे चुनाव के परिणाम की घोषणा की तारीख तक इस उप-धारा के तहत संदर्भित नहीं किया जाएगा।"

धारा 156 - "सिविल अदालतों के क्षेत्राधिकार का वर्जना - किसी भी अन्य कानून में निहित किसी भी बात के बावजूद, किसी मध्यस्थ, परिसमापक, रजिस्ट्रार द्वारा इस अधिनियम के तहत कोई आदेश या पंचाट पारित नहीं किया गया, कोई निर्णय या कार्रवाई नहीं की गई या कोई निर्देश जारी नहीं किया गया। उसके द्वारा प्राधिकृत या सशक्त अधिकारी, ट्रिब्यूनल या सरकार या उनके अधीनस्थ कोई भी अधिकारी, किसी भी अदालत में पूछताछ के लिए बुलाए जाने के लिए उत्तरदायी होगा और किसी भी अदालत द्वारा कोई निषेधाज्ञा नहीं दी जाएगी। इस अधिनियम द्वारा या

इसके अंतर्गत किये गये या किये जाने वाले किसी भी कार्य के लिए जारी नहीं की जाएगी।"

1986 अधिनियम की धारा 3 में लिखा है:-

"धारा 3. अधिनियम किसी अन्य कानून के अल्पीकरण में नहीं है - इस अधिनियम के प्रावधान उस समय लागू किसी भी अन्य कानून के प्रावधानों के अल्पीकरण में नहीं, बल्कि इसके अतिरिक्त होंगे।"

आगे बढ़ने से पहले, उस पृष्ठभूमि, उद्देश्यों और कारणों तथा उद्देश्य को जानना उपयोगी है जिसके लिए 1986 अधिनियम अधिनियमित किया गया है। औद्योगिक क्रांति और अंतर्राष्ट्रीय व्यापार और वाणिज्य के क्षेत्र में व्यापक विकास और विस्तार के परिणामस्वरूप, उपभोक्ताओं की जरूरतों को पूरा करने के लिए विभिन्न प्रकार की उपभोक्ता वस्तुओं ने बाजार में प्रवेश किया और अधिकांश सेवाएं जैसे बीमा, परिवहन, बिजली, आवास, मनोरंजन, वित्त और बैंकिंग उपभोक्ताओं को उपलब्ध करा दिया गया है। बेहतर ऊर्जा और बाजारों के साथ निर्माताओं और व्यापारियों के सुव्यवस्थित क्षेत्र उभरे हैं जो व्यापारियों और उपभोक्ताओं के बीच संबंधों को प्रभावित कर रहे हैं। इलेक्ट्रॉनिक और प्रिंट मीडिया दोनों की मदद और सहायता से, टेलीविजन, समाचार पत्रों और पत्रिकाओं में वस्तुओं और सेवाओं के विज्ञापनों ने उपभोक्ताओं द्वारा उनकी मांग पर बहुत प्रभाव डाला

है, हालांकि विनिर्माण दोष या कमियां या कमियां हो सकती हैं। माल की गुणवत्ता, मात्रा और शुद्धता में कमी या प्रदान की गई सेवाओं में कमी हो सकती है। जनता के हित में और उपभोक्ताओं की सुरक्षा के लिए, बाजार में मिलावटी और घटिया वस्तुओं की जाँच करना आवश्यक हो गया है। भारतीय अनुबंध अधिनियम, 1972, माल की बिक्री अधिनियम, 1930, भारतीय दंड संहिता, 1960 जैसे कई अन्य कानूनों के बावजूद, वजन और माप मानक अधिनियम, 1976 और मोटर वाहन अधिनियम, 1938 आदि लागू हैं, बहुत कम उपभोक्ता संरक्षण के क्षेत्र में उपलब्धि हासिल की जा सकती है। यद्यपि एमआरटीपी अधिनियम 1969 और मिलावट निवारण अधिनियम, 1954 उपभोक्ताओं को राहत प्रदान करते हैं, फिर भी उपभोक्ताओं को शोषण से बचाने और उन्हें मिलावटी और घटिया वस्तुओं और सेवाओं में कमी से बचाने और उनके हितों की रक्षा करने के लिए यह आवश्यक हो गया है।

आम सभा में उपभोक्ता संरक्षण संकल्प संख्या 39/248 पारित किया गया और भारत इस संकल्प का हस्ताक्षरकर्ता है। संयुक्त राष्ट्र ने 1985 में एक प्रस्ताव पारित किया था जिसमें कुछ दिशानिर्देशों का संकेत दिया गया था जिसके तहत सरकारें उपभोक्ताओं के हितों की बेहतर सुरक्षा के लिए कानून बना सकती थीं और विकासशील देशों में उपभोक्ताओं को उनके स्वास्थ्य और सुरक्षा के लिए खतरे से बचाने के लिए ऐसे कानून अधिक

आवश्यक थे। उन्हें शीघ्र और सस्ता समाधान उपलब्ध कराएं। इस पृष्ठभूमि के साथ, 1986 अधिनियम लागू किया गया था। उद्देश्यों और कारणों के विवरण से पता चलता है कि उपभोक्ता संरक्षण विधेयक 1986 उपभोक्ताओं के हितों की बेहतर सुरक्षा प्रदान करने और उपभोक्ता विवादों के निपटारे में उपभोक्ता परिषद और अन्य प्राधिकरणों की स्थापना के 667 **सचिव तिरूमुरूगन सहकारी कृषि ऋण समिति बनाम एम. ललिता** लिए प्रावधान करने की मांग करता है। उससे जुड़े मामले यह अन्य बातों के अलावा, उपभोक्ताओं के अधिकारों को बढ़ावा देने और उनकी रक्षा करने का प्रयास करता है, जैसे कि उन वस्तुओं के विपणन के खिलाफ सुरक्षा जो जीवन और संपत्ति के लिए खतरनाक हैं; उपभोक्ता को अनुचित व्यापार प्रथाओं से बचाने के लिए वस्तुओं की गुणवत्ता, मात्रा, क्षमता, शुद्धता, मानक और कीमत के बारे में सूचित होने का अधिकार; जहां भी संभव हो, प्रतिस्पर्धी कीमतों पर माल के प्राधिकारी तक पहुंच सुनिश्चित करने का अधिकार; सुनवाई का अधिकार और यह आश्वस्त होने का अधिकार कि उपभोक्ताओं के हितों पर उचित मंचों पर उचित विचार किया जाएगा: अनुचित व्यापार प्रथाओं या उपभोक्ताओं के बेईमान शोषण के खिलाफ निवारण मांगने का अधिकार और उपभोक्ता शिक्षा का अधिकार। इसका उद्देश्य उपभोक्ता विवादों का त्वरित और सरल निवारण प्रदान करना भी है, जिला, राज्य और केंद्र स्तर पर एक अर्ध न्यायिक मशीनरी स्थापित करने

की मांग की गई है। ये अर्ध न्यायिक निकाय प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का पालन करेंगे और उपभोक्ताओं को विशिष्ट प्रकृति की राहत देने और जहां भी उचित हो, मुआवजा देने का अधिकार दिया गया है। अर्ध न्यायिक निकायों द्वारा दिए गए आदेशों का पालन न करने पर दंड का भी प्रावधान किया गया है।

अधिनियम की प्रस्तावना घोषित करती है कि यह उपभोक्ताओं के हितों की बेहतर सुरक्षा प्रदान करने और उपभोक्ताओं के विवादों और उनसे जुड़े मामलों के निपटारे के लिए उपभोक्ता परिषदों और अन्य प्राधिकरणों की स्थापना का प्रावधान करने वाला एक अधिनियम है। अधिनियम की धारा 3 में स्पष्ट और सुस्पष्ट शब्दों में कहा गया है कि 1986 अधिनियम के प्रावधान उस समय लागू किसी अन्य कानून के प्रावधानों के अतिरिक्त होंगे न कि उनके अल्पीकरण में।

उद्देश्यों और कारणों के विवरण और 1986 अधिनियम की योजना से, यह स्पष्ट है कि अधिनियम का मुख्य उद्देश्य उपभोक्ता के हितों की बेहतर सुरक्षा प्रदान करना है और उस उद्देश्य के लिए बेहतर निवारण, तंत्र प्रदान करना है। जो उपभोक्ताओं को सस्ता, आसान, त्वरित एवं प्रभावी समाधान उपलब्ध कराता है। अधिनियम के उद्देश्य को पूरा करने के लिए, जिला, राज्य और राष्ट्रीय स्तर पर विभिन्न अर्ध न्यायिक मंच स्थापित किए गए हैं, जिनमें व्यापक शक्तियां निहित हैं। ये अर्ध न्यायिक मंच, प्राकृतिक

न्याय के सिद्धांतों का पालन करते हुए, एक विशिष्ट प्रकृति की राहत देने और, जहां भी उचित हो, उपभोक्ताओं को मुआवजा देने और उनके आदेशों का पालन न करने पर जुर्माना लगाने का अधिकार रखते हैं।

अधिनियम की धारा 3 के अनुसार, जैसा कि पहले ही ऊपर बताया गया है, अधिनियम के प्रावधान उस समय लागू किसी भी अन्य कानून के किसी भी अन्य प्रावधान के अतिरिक्त होंगे न कि उसके अल्पीकरण में। अधिनियम की योजना और उपभोक्ताओं के हितों की रक्षा के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए, अतिरिक्त/विस्तारित क्षेत्राधिकार को अर्थ देने के लिए वर्तमान मामले के संदर्भ में प्रावधानों की व्यापक, सकारात्मक और उद्देश्यपूर्ण व्याख्या की जानी चाहिए। खासकर जब धारा 3 अन्य अधिनियमों के तहत प्रदान किए गए अन्य उपायों के अलावा अधिनियम के तहत उपचार प्रदान करने का प्रयास करती है, जब तक कि स्पष्ट रोक न हो।

हम जो दृष्टिकोण अपना रहे हैं वह इस न्यायालय के पहले के निर्णयों **लखनऊ विकास प्राधिकरण बनाम एमके गुप्ता, (1994) 1 एससीसी 243 द्वारा समर्थित है जिसमें** इस न्यायालय ने इस प्रकार कहा है कि :-

"इसलिए हम सीधे इन अपीलों में शामिल कानूनी मुद्दे पर आते हैं। लेकिन ऐसा करने से पहले और अधिनियम के तहत शिकायत पर विचार करने

के लिए जिला फोरम या राज्य या राष्ट्रीय आयोग के अधिकार क्षेत्र के सवाल की जांच करने से पहले, अधिनियम का उद्देश्य सुनिश्चित करना उचित प्रतीत होता है कि वह उद्देश्य जिसे वह प्राप्त करना चाहता है और सामाजिक उद्देश्य की प्रकृति जिसे वह बढ़ावा देना चाहता है क्योंकि यह इसमें शामिल मुद्दे को समझने में सुविधा प्रदान करेगा और अधिनियम के विभिन्न प्रावधानों को प्रभावी ढंग से समझने में सहायता करेगा। अधिनियम की प्रस्तावना से शुरू करने के लिए, जो उपभोक्ताओं के हितों की सुरक्षा प्रदान करने के लिए अधिनियमित किए गए विधायी इरादे को सुनिश्चित करने के लिए उपयोगी सहायता प्रदान कर सकता है। 'संरक्षण' शब्द का उपयोग अधिनियम के निर्माताओं के दिमाग की कुंजी प्रस्तुत करता है। विभिन्न परिभाषाएं और प्रावधान जो विस्तृत हैं इस उद्देश्य को प्राप्त करने के प्रयास को इस स्थापित दृष्टिकोण से विचलित हुए बिना इस प्रकाश में समझा जाना चाहिए कि, एक प्रस्तावना किसी प्रावधान के अन्यथा स्पष्ट अर्थ को नियंत्रित नहीं कर सकती है। वास्तव में यह कानून आम आदमी को ऐसी गलतियों से बचाने की लंबे समय से महसूस की गई आवश्यकता को पूरा करता है, जिसके लिए विभिन्न कारणों से सामान्य कानून के तहत उपचार भ्रामक हो गया है।राज्य को हस्तक्षेप करने और उपभोक्ताओं के हितों की रक्षा करने की अनुमति देने वाले विभिन्न कानून और विनियम बेईमान लोगों के लिए आश्रय स्थल बन गए

हैं क्योंकि लागू करने वाली मशीनरी या तो आगे नहीं बढ़ती है या यह अप्रभावी, अकुशल रूप से और उन कारणों जिन्हें बताना आवश्यक नहीं है। अधिनियम का महत्व उपभोक्ता को बाजार अर्थव्यवस्था में सीधे भाग लेने में सक्षम बनाकर समाज के कल्याण को बढ़ावा देने से जुड़ा है। यह एक उपभोक्ता की असहायता को दूर करने का प्रयास करता है जिसका वह शक्तिशाली के खिलाफ, व्यवसाय में सामना करता है, जिसे 'रैकेट का एक नेटवर्क' या एक समाज के रूप में वर्णित किया गया है, जिसमें 'निर्माताओं ने बाकियों को लूटने की शक्ति हासिल कर ली है' और सार्वजनिक निकायों जो निष्क्रियता के भंडार में तब्दील होते जा रहे हैं, जहां कागज कर्तव्य और जिम्मेदारी के तौर पर एक डेस्क से दूसरे डेस्क तक नहीं जाते हैं, बल्कि अनावश्यक विचार के लिए जाते हैं, जिससे आम आदमी असहाय, हतप्रभ और स्तब्ध रह जाता है। यह बीमारी इतनी विकराल, व्यापक और गहरी होती जा रही है कि समाज इससे परेशान होने, शिकायत करने और इसके खिलाफ लड़ने के बजाय इसे जीवन का हिस्सा मान रहा है। इन अविश्वसनीय लेकिन कठोर वास्तविकताओं में अधिनियमन एक आशा की किरण प्रतीत होता है, जो समय के साथ बिगड़े हुए की जांच करने में सफल हो सकता है।"

फेयर एयर इंजीनियर्स प्रा. लिमिटेड और अन्य बनाम. एनके मोदी,, (1996) 6 एससीसी 385 में इस न्यायालय ने, लखनऊ विकास प्राधिकरण

मामले (सुप्रा) का उल्लेख करने के बाद, माना कि अधिनियम के प्रावधानों को अधिनियम के उद्देश्य और उद्देश्य को प्रभावी बनाने के लिए व्यापक रूप से समझा जाना चाहिए। इसमें कहा गया है कि "यह देखा गया है कि धारा 3 में परिकल्पना की गई है कि अधिनियम के प्रावधान लागू किसी भी अन्य कानून के अतिरिक्त हैं और उसका अल्पीकरण नहीं करते हैं। यह सच है, जैसा कि श्री सूरी ने सही तर्क दिया है, कि ये शब्द "तत्समय लागू किसी भी अन्य कानून के प्रावधानों के अल्पीकरण में" को उचित अर्थ और प्रभाव दिया जाएगा और यदि शिकायत पर रोक नहीं लगाई जाती है और पार्टियों को मध्यस्थता के लिए बाध्य नहीं किया जाता है, तो अधिनियम मध्यस्थता अधिनियम के प्रावधानों के अल्पीकरण में कार्य करने का आशय रखता है। प्रथम दृष्टया, विवाद प्रशंसनीय प्रतीत होता है, लेकिन अधिनियम के प्रावधानों के निर्माण और रूपरेखा पर हमें लगता है कि विवाद अच्छी तरह से आधारित नहीं है। संसद मध्यस्थता अधिनियम के प्रावधानों से अवगत है और अनुबंध अधिनियम, 1872 और सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 9 के तहत आनुषांगिक उपचार उपलब्ध हैं जैसे सक्षम सिविल क्षेत्राधिकार वाले न्यायालय से सिविल कार्य के अधिकार का लाभ उठाना। फिर भी, अधिनियम अतिरिक्त उपाय प्रदान करता है।" इसके अलावा, 1986 के अधिनियम के तहत मंचों के क्षेत्राधिकार से निपटने के लिए पैराग्राफ 16 में इस न्यायालय ने इस प्रकार कहा है:-

"16, इसलिए, यह स्पष्ट होगा कि विधायिका का इरादा सहमतिपूर्ण मध्यस्थता के अतिरिक्त एक उपाय प्रदान करना है जिसे मध्यस्थता अधिनियम के तहत लागू किया जा सकता है या सिविल प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों के तहत एक मुकदमे में सिविल कार्रवाई की जा सकती है। जिससे, जैसा कि, देखा गया है, अधिनियम की धारा 34 एक स्वचालित अधिकार प्रदान करती है और न ही अधिनियम के तहत न्यायिक प्राधिकरण द्वारा शक्ति के प्रयोग पर एक स्वचालित प्रतिबंध बनाती है। यह विवेक का मामला है, इस परिप्रेक्ष्य में विचार करने पर, हम मानते हैं कि यद्यपि जिला फोरम, राज्य आयोग और राष्ट्रीय आयोग न्यायिक प्राधिकरण हैं, मध्यस्थता अधिनियम की धारा 34 के प्रयोजन के लिए, अधिनियम के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए और उसकी धारा 3 के संचालन से, हमारा यह मानना, उचित है कि, अधिनियम के तहत बनाए गए ये मंच पार्टियों के बीच हुए अनुबंध के अनुसार पार्टियों को मध्यस्थता कार्यवाही में धकेलने के बजाय अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार मामलों को आगे बढ़ाने के लिए स्वतंत्र हैं। इसका कारण यह है कि अधिनियम का उद्देश्य उपभोक्ताओं को

बोझिल मध्यस्थता कार्यवाही या सिविल कार्रवाई से राहत देना है, जब तक कि मंच स्वयं और किसी विशेष मामले के विशिष्ट तथ्यों और परिस्थितियों पर इस निष्कर्ष पर न पहुंचें कि विवादों के न्यायनिर्णयन के लिए अधिनियम में वर्णित उचित मंच अन्यथा उपयुक्त होगा।"

(जोर दिया गया)

फिर से **स्प्रिंग मीडोज अस्पताल और अन्य बनाम हरजोत अहलूवालिया जरिए के. एस. और अन्य (1998) 4 एससीसी 39 में**, इस न्यायालय ने उस पृष्ठभूमि पर ध्यान दिया जिसमें 1986 अधिनियम को क़ानून की किताब में रखा गया था, यह देखा गया कि अधिनियम उपभोक्ता विवादों के त्वरित निपटान के लिए एक रूपरेखा तैयार करता है और मौजूदा बुराइयों को दूर करने का प्रयास किया गया है। सामान्य न्यायालय प्रणाली. एक लाभकारी विधान होने के कारण इस अधिनियम को एक उदारवादी स्वरूप प्राप्त होना चाहिए।

इस न्यायालय के तीन विद्वान न्यायाधीशों की एक पीठ ने हाल ही में एक निर्णय **कर्नाटक राज्य बनाम. विश्वबरथी हाउस बिल्डिंग कॉप। समाज और अन्य,,** (2003) 2 एससीसी 412 में विचार व्यक्त किया कि 1986 अधिनियम को आम आदमी को गलतियों से बचाने की लंबे समय से महसूस की गई आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए लागू किया गया था,

जहां सभी इरादों और उद्देश्यों के लिए सामान्य कानून भ्रामक हो गया था और उक्त **671 सचिव तिरूमुरूगन सहकारी कृषि ऋण समिति बनाम एम. ललिता** अधिनियम के संदर्भ में, एक उपभोक्ता सीधे कार्यवाही में भाग लेने का हकदार है जिसके परिणामस्वरूप एक शक्तिशाली व्यावसायिक घराने के खिलाफ उसकी असहायता का ध्यान रखा जा सकता है। फेयर एयर इंजीनियर्स (पी) लिमिटेड केस (पूर्वकथित) का उल्लेख करते हुए, न्यायालय ने कहा कि उक्त अधिनियम के प्रावधानों की यथासंभव व्यापक रूप से व्याख्या करने की आवश्यकता है। क्षेत्राधिकार के प्रश्न पर यह कहा गया है कि अधिनियम के तहत मंचों के पास शिकायत पर विचार करने का क्षेत्राधिकार है, इस तथ्य के बावजूद कि अन्य मंचों/अदालतों के पास भी मामले पर निर्णय लेने का क्षेत्राधिकार होगा। यह भी देखा गया है कि अधिनियम इस आशय की एक और सुरक्षा प्रदान करता है कि यदि किसी शिकायत में जटिल मुद्दे शामिल हैं, जिसमें विशेषज्ञों के साक्ष्य की रिकॉर्डिंग की आवश्यकता होती है, तो शिकायतकर्ता उचित राहत के लिए सिविल कोर्ट से संपर्क करने के लिए स्वतंत्र होगा।

अपीलकर्ता के विद्वान वकील ने इस न्यायालय के निर्णय **अध्यक्ष, तिरुवल्लुवर परिवहन निगम बनाम। उपभोक्ता संरक्षण परिषद,,** (1995) 2 एससीसी 479 पर दृढ़ता से भरोसा किया। उस मामले के तथ्यों और उसमें विचार किए गए प्रश्न पर गहराई से नजर डालने से यह स्पष्ट हो जाता है

कि यह मोटर वाहन अधिनियम, 1988 में निहित विशिष्ट प्रावधानों के संबंध में उस मामले के तथ्य को नियंत्रित करता है। संक्षेप में मामले के तथ्य यह हैं कि ए व्यक्ति एक ओमनी बस में यात्रा कर रहा था, बस के चालक ने एक बैलगाड़ी को ओवरटेक करने की कोशिश की जिसके कारण बैल घबरा गए जिसके बाद चालक ने बस को बाईं ओर मोड़ दिया और ब्रेक लगा दिए। इस स्थिति में, जो व्यक्ति पीछे की सीट पर बैठा था, वह आगे की ओर गिर गया और लोहे की पट्टी से टकरा गया, जिससे उसके सिर में गंभीर चोट लगी और बाद में उसकी मौत हो गई। मृतक पीड़ित के कानूनी प्रतिनिधियों ने मोटर वाहन अधिनियम, 1988 के तहत गठित मोटर दुर्घटना दावा न्यायाधिकरण के समक्ष दावा याचिका दायर नहीं की। मोटर दुर्घटना दावा न्यायाधिकरण के समक्ष दावा याचिका दायर करने की सीमा अवधि समाप्त होने के बाद, मृतक के एलआरने राष्ट्रीय आयोग के समक्ष 20 लाख रुपये का दावा करते हुए शिकायत दर्ज की। जैसा कि निर्णय के पैराग्राफ 6 से देखा जा सकता है, विचार के लिए जो प्रश्न उठा, वह यह था कि क्या राष्ट्रीय आयोग के पास किसी दुर्घटना के संबंध में दावा आवेदन पर विचार करने और मुआवजा देने का अधिकार क्षेत्र था, जिसमें किसी व्यक्ति की मृत्यु मोटरगाड़ी के उपयोग से होना शामिल था। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि मोटर वाहन अधिनियम, 1988 के तहत गठित दावा न्यायाधिकरणों के पास मुआवजे के दावे पर विचार करने

का अधिकार क्षेत्र था, जो स्पष्ट रूप से मोटर वाहन अधिनियम, 1988 की धारा 165 के दायरे में आता था, यह माना कि 1988 अधिनियम एक विशेष अधिनियम कहा जा सकता है जो कि मोटर वाहन के उपयोग से उत्पन्न होने वाले मुआवजे के दावों के संबंध में है। यदि कोई 1986 के अधिनियम की धारा 2(1)(सी) में शिकायत की परिभाषा और धारा 2(1)(ओ) में सेवा के प्रावधान को साथ में पढ़ता 672 सुप्रीम कोर्ट रिपोर्टस (2003) एसयूपीपी 6 एस. सी. आर। है, तो यह पाया गया है कि दुर्घटना का मृतक को प्रदान की गई सेवा से कोई लेना-देना नहीं है। इस न्यायालय ने माना कि इस मामले में शिकायत उपभोक्ता द्वारा किराए पर ली गई या ली गई किसी भी सेवा के संबंध में नहीं कहा जा सकता क्योंकि उपभोक्ता को लगी चोट का उसके द्वारा प्रदान की गई या ली गई सेवा से कोई लेना-देना नहीं है। वह एक ऐसा मामला था जिसमें यह पाया गया कि राष्ट्रीय आयोग के पास कोई अधिकार क्षेत्र नहीं था। यह 1986 अधिनियम के तहत बनाए गए फोरम के समक्ष उपलब्ध अतिरिक्त उपाय का मामला नहीं था। हमारे विचार में उक्त निर्णय किसी भी तरह से अपीलकर्ता के मामले को आगे नहीं बढ़ाता है।

धुलाभाई मामले (सुप्रा) के निर्णय से भी अपीलकर्ता को मदद नहीं मिलती है। वर्तमान मामला ऐसा नहीं है जहां विचार करने वाला प्रश्न अधिनियम की धारा 156 सपठित धारा 90 के प्रावधानों के मद्देनजर

सिविल कोर्ट के क्षेत्राधिकार को अपवर्जित करना है। 1986 अधिनियम के प्रावधान, जैसा कि ऊपर पहले ही स्पष्ट किया जा चुका है, अन्य अधिनियमों के तहत उपलब्ध अन्य प्रावधानों के अतिरिक्त लागू होते हैं। इसका तात्पर्य यह है कि विवादों के निवारण के लिए 1986 अधिनियम के तहत उपलब्ध उपाय अधिनियम के तहत उपलब्ध उपायों के अतिरिक्त हैं। 1986 के अधिनियम के तहत हमें मंचों को प्रदत्त अतिरिक्त क्षेत्राधिकार के संबंध में विचार करना होगा न कि उनके अपवर्जन के संबंध में। धुलाभाई मामले में विचार यह था कि क्या सिविल न्यायालय के क्षेत्राधिकार को अपवर्जित रखा गया था। प्रस्ताव (1) और (2) इंगित करते हैं कि जहां क़ानून विशेष न्यायाधिकरणों के आदेशों को अंतिम रूप देता है, वहां सिविल अदालतों के अधिकार क्षेत्र को बाहर रखा जाना चाहिए, यदि ऐसा करने के लिए पर्याप्त उपाय हैं जो सिविल अदालतें आम तौर पर करती हैं। इसके अलावा, जहां अदालत के अधिकार क्षेत्र पर स्पष्ट रोक है, वहां दिए गए उपायों की पर्याप्तता या पर्याप्तता का पता लगाने के लिए विशेष अधिनियम की योजना की जांच प्रासंगिक हो सकती है, लेकिन सिविल अदालत के अधिकार क्षेत्र को बनाए रखने के लिए निर्णायक नहीं है। 1986 अधिनियम के तहत पीड़ित पक्ष को जो उपचार उपलब्ध हैं, वे व्यापक हैं। उदाहरण के लिए, विशिष्ट राहत देने के अलावा, 1986 अधिनियम के तहत मंचों के पास मानसिक पीड़ा, पीड़ा आदि के लिए मुआवजा देने का

अधिकार क्षेत्र है, जो संभवतः अधिनियम की धारा 90 के तहत विवाद के संबंध में अधिनियम के तहत नहीं दिया जा सकता है। केवल इसलिए कि अधिनियम और मंचों के तहत सदस्यों और समाज के प्रबंधन के बीच अधिकार और देनदारियां बनाई गई हैं, यह स्पष्ट रूप से और जानबूझकर एक निश्चित उद्देश्य की पूर्ति के लिए 1986 अधिनियम के तहत मंचों पर प्रदत्त क्षेत्राधिकार को छीन या बाहर नहीं कर सकता है। अधिनियम के उद्देश्यों और कारणों की शर्तें, जिनका संदर्भ पहले ही ऊपर दिया जा चुका है। जब धुलाभाई के मामले का निर्णय सुनाया गया तो पार्टियों को अतिरिक्त उपाय प्रदान करने वाले 1986 अधिनियम के समान प्रावधान न तो उपलब्ध थे और न ही उन पर विचार किया गया था।

यदि अपीलकर्ता के विद्वान वकील के तर्क को स्वीकार कर लिया जाता है तो यह 1986 अधिनियम के तहत स्पष्ट रूप से प्रदान किए गए अतिरिक्त उपायों और मंचों को छीनने की ओर ले जाता है, जो स्वीकार्य नहीं है। निर्णयों में टकराव का प्रश्न ही नहीं उठता। यदि पार्टियां अधिनियम और 1986 अधिनियम के तहत बनाए गए दोनों मंचों पर संपर्क करती हैं, जैसा कि फेयर एयर इंजीनियर्स (पी) लिमिटेड (सुप्रा) के मामले में संकेत दिया गया है, तो 1986 अधिनियम के तहत यह मंच पर निर्भर करता है कि वह पार्टियों को आगे बढ़ने के लिए छोड़ दे। या मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर अन्य मंचों पर उपचार का लाभ उठाएं।

इस प्रकार अधिनियम के तहत आने वाले विवादों को मध्यस्थता के लिए भेजना 1986 अधिनियम पर अधिप्रभावी होगा, यह गलत है। इस मत को राज्य आयोग ने दिया था। जिसकी पुष्टि राष्ट्रीय आयोग ने की थी। राष्ट्रीय आयोग ने सही पुष्टि की थी। हालांकि राष्ट्रीय आयोग ने इस बात पर गौर नहीं फरमाया कि राज्य आयोग ने अपील में उठाये अन्य सभी तर्कों के गुणावगुण पर निस्तारित नहीं किया था। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि प्रत्यर्थीगण के द्वारा जिला फोरम के समक्ष की गयी याचिका संधारणीय है तथा जिला फोरम की हस्तगत विवाद सुनने का क्षेत्राधिकार है। साथ ही अपीलार्थी द्वारा अपनी अपील में अन्य मुद्दों को राज्य आयोग द्वारा गुणावगुण पर निस्तारित करने के लिए राज्य आयोग को मामला प्रतिप्रेषित किये जाने का जो वैकल्पिक अनुतोष मांगा है। वह स्वीकार किये जाने योग्य है। उपर्युक्त संपूर्ण विवेचन से राष्ट्रीय आयोग के द्वारा विवादों को लेकर जिला फोरम द्वारा सुने जाने की अधिकारिता होने के संबंध में किये गये मत की पुष्टि की जाती है तथा राज्य आयोग को इस मत से प्रभावित हुए बिना कि 1986 के अधिनियम के तहत उपर्युक्त संपूर्ण विवेचन से राष्ट्रीय आयोग के द्वारा विवादों को लेकर जिला फोरम द्वारा सुने जाने की अधिकारिता होने के संबंध में किये गये मत की पुष्टि की जाती है तथा राज्य आयोग को इस मत से प्रभावित हुए बिना कि 1986 के अधिनियम

के तहत विवाद को सुनने की अधिकारिता है। संपूर्ण अन्य विवादों को को गुणावगुण पर निस्तारित जाने के लिए प्रतिप्रेषित किया जाता है।

मामले से अलग होने से पहले हम वरिष्ठ वकील श्री टीएलवी अय्यर द्वारा दी गई सहायता की सराहना करते हैं।

उपरोक्त शर्तों के अनुसार अपील का निपटारा किया जाता है।

कोई शुल्क नहीं।

यह अनुवाद आर्टिफिशल इंटेलिजेन्स टूल सुवास की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी रचना मीना (आर.जे.एस) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए , निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा |